दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र

हिमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

❑ वर्ष 62 ❑ अंक-23 ❑ दिल्ली ❑ सितम्बर (प्रथम) 2024 ❑ मूल्य : 2 रु.

भारतीय दलित साहित्य अकादमी, उड़ीसा प्रदेश का प्रादेशिक सम्मेलन सम्पन्न

देश में असमानताओं व सत्ता-सम्पदा में जातिगत असन्तुलन को मिटाने के लिए जाति जनगणना जरूरी

डा. सोहनपाल सुमनाक्षर

भारतीय दलित साहित्य अकादमी की उड़ीसा प्रदेश शाखा द्वारा सम्बलपुर में आयोजित प्रादेशिक दलित साहित्यकार सम्मेलन में अकादमी के राष्ट्रीय अध्यक्ष डा. सोहनपाल सुमनाक्षर ने कहा कि देश में असन्तुलन को मिटाने के लिए जाति जनगणना जरूरी है ताकि 'जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी' के फार्मूला पर अमल करके इसे साकार किया जा सके।

1 सितम्बर, 2024 को सम्बलपुर के उड़ीसा सांस्कृतिक समाज सभागृह में आयोजित इस प्रादेशिक सम्मेलन में अकादमी के राष्ट्रीय अध्यक्ष डा. सोहनपाल सुमनाक्षर मुख्य अतिथि थे, सांसद (राज्यसभा) श्री निरंजन बी.सी. अतिविशिष्ठ अतिथि थे। सम्मेलन में पधारकर शोभा बढ़ाने वाले विशेष अतिथि थे–पद्मश्री डा. जितेन्द्र हरिपाल, पद्मश्री मित्रभानु गौन्टीया, पद्मश्री भगवान प्रधान, अकादमी की उड़ीसा प्रदेश शाखा के प्रदेशाध्यक्ष श्री निहाल सिंह ने समारोह की अध्यक्षता की। अकादमी की प्रदेश–उपाध्यक्ष श्रीमती मोमीना खातून समारोह की संचालिका थी। राष्ट्रीय महासचिव प्रो. जय सुमनाक्षर विशेष आमंत्रित अतिथि थे।

राष्ट्रीय अध्यक्ष डा. सोहनपाल सुमनाक्षर ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि सदियों से जाति व वर्ग की श्रेष्ठता के नाम पर देश की बाहुजनों की आबादी को ठगा जाता रहा। मनु की सामाजिक आचार संहिता 'मनुस्मृति' को लागू करके समाज को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वर्ग में बांटकर हजारों सालों तक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्ग सिर्फ 15 फीसदी होते हुए भी बहुजनों की 85 फीसदी आबादी पर शासन करता रहा। यही 15 फीसदी का सवर्ण वर्ग मनु वर्ण व्यवस्था के आधार पर देश की सत्ता, धन, सम्पदा, जमीन–जायदाद के साथ–साथ शिक्षा–दीक्षा प्रशिक्षण, व्यवसाय, कारोबार पर उसका एकाधिकार था। 85 फीसदी आबादी को 'शूद्र' वर्ण का नाम देकर उसे शिक्षा–दीक्षा, सत्ता– सम्पदा के अधिकारों से वंचित कर उसे केवल अपने उपयोग व उपभोग की वस्तु बना अपना 'गुलाम' बनाये रखा। 'मनुस्मृति' आचार संहिता का हवाला देकर उसे सवर्णों का दुराचार, दुर्व्यवहार, शोषण, अपमान, छुआछूत, नीच–ऊंच, भेदभाव को सहने के लिए बाध्य किया गया। उसकी स्वयं न कोई जिन्दगी थी, और न कोई चाहत या इच्छा। उसने अपने अधिकारों के लिए थोड़ा सा भी सिर उठाया, वर्ण व्यवस्था के नाम पर उसे कुचल दिया गया। शम्बूक ऋषि–शूद्र होकर तपस्या कर रहा था तो उसका सिर काट दिया गया। एकलव्य शूद्र होकर धनुर्विद्या सीख रहा था तो उसका अंगूठा काट दिया गया।

शूरवीर कर्ण सारथी पुत्र (शूद्र) होने के कारण तथा वीर एकलव्य शूद्र पुत्र होने के कारण महाभारत युद्ध में नहीं लड़ सके। हिन्दुओं के धर्मशास्त्रों को सवर्णों के पक्ष में लिखा गया और धर्म के नाम पर उन्हें मानने व उन पर आचरण करने का उपदेश दिया गया। वेद, मनुस्मृति व गीता में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों की उत्पत्ति सीधे भगवान विष्णु व भगवान श्रीकृष्ण से कराकर शूद्रों को नीच कर्मों के कारण पाप योनि का होने पर अधिकार विहीन 'शूद्र' वर्ण में डाल दिया जिससे कि वे अपने मानवीय अधिकारों के लिए कभी सिर न उठा सकें। अंग्रेजों के भारत आने तक यह दूषित, अमानवीय वर्ण व्यवस्था चलती रही। अंग्रेजों ने भारत में अपने शासन में शूद्र–अछूतों के साथ सवर्णों के इस दुर्व्यवहार को देखा, परखा और फिर देश व समाज में सबको बराबरी के अवसर देने के लिए सरकारी पदों, शिक्षा संस्थानों व न्यायालयों में सुधार करने शुरू किये। देश में किसकी कितनी आबादी है, यह जानने के लिए सन्

(शेष पृष्ठ 4 पर)

सम्पादकीय

मानवता विरोधी है मनुस्मृति

विश्व महिला दिवस के अवसर पर जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में, मनुस्मृति को महिला विरोधी मानते हुए वहां के छात्रों ने मनुस्मृति की प्रति जलाई। इससे बहुत पहले 25 दिसम्बर, 1927 को बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने मनुस्मृति को दलित विरोधी मानते हुए उसकी होली जलाई थी। भारतीय दलित साहित्य अकादमी ने 1995 में मनुस्मृति और उसके रचियता मनु के पुतले को नई दिल्ली के कनाट प्लेस में आग लगाई थी चूंकि ये दोनों वर्ण व्यवस्था के पोषक हैं और इनके कारण दलितों (शूद्रों) के साथ हजारों साल से अत्याचार, अन्याय, दमन, शोषण, उत्पीड़न, अपमान, दुराचार होता आया है और आज भी उसके साथ छुआछूत, ऊंच–नीच, भेदभाव जारी है।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में मनुस्मृति को सर्वोपरि मानता है और प्राचीन काल में समाज व्यवस्था, न्याय व्यवस्था शासन–प्रशासन, राज–काज मनुस्मृति के आधार पर चलता था, इसलिए मनुस्मृति की छाप सवर्णों के मन पर आज तक इस कदर बैठी हुई है कि वह 'स्त्री को पैर की जूती' और शूद्र–अछूत–दलित को 'इन्सान' मानने के लिए तैयार ही नहीं है, जबकि देश को सबसे ज्यादा नुकसान 'मनुस्मृति' के कारण हुआ है जिसने मनुष्य को चार वर्ण–ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र में बांटकर राष्ट्रीय एकता, अखंडता, बन्धुता को समूल नष्ट कर दिया। इसी का यह परिणाम है कि वर्ण व्यवस्था के कारण समाज का ताना–बाना नष्ट होने से देश कमजोर हो गया और वह दो हजार साल तक विदेशियों का गुलाम रहा। मनुस्मृति और उसके रचियता मनु ही देश की गुलामी के लिए जिम्मेदार हैं।

आर्यों को मनुस्मृति सर्वोपरि इसलिए है कि इसमें 'हिटलर' के आर्य सिद्धान्त की भांति ब्राह्मण को भगवान की श्रेष्ठतम कृति के रूप में दर्शाया गया है। ब्राह्मण की पातकी कर्म करने पर भी उसे 'अवध्य' ही माना गया है, शूद्र (दलित) को तो जानवर से निकृष्टतम प्राणी माना है।

मनु की वर्ण व्यवस्था सामाजिक अन्याय का निन्दनीय स्वरूप रहा है। जब शूद्र को ब्राह्मण के साथ बैठने पर नितम्ब कटवाना पड़ा हो, ब्राह्मण को अपशब्द कहने पर मुंह में दस अंगुल की जलती हुई कील ठोकी जाती रही हो, हत्या के दोषी ब्राह्मण को केवल सिर मुंडा कर छोड़ने का प्रावधान देने वाली 'मनुस्मृति' की जितनी निन्दा की जाए, थोड़ी ही है।

मनु की 'मनुस्मृति' में वर्णित दण्ड व्यवस्था नितान्त शूद्र (दलित) विरोधी है जिसने दलितों के प्रति सवर्णों के दिलों में जात–पांत, ऊंच–नीच, भेदभाव, छुआछूत का ऐसा जहर घोला कि समाज में आज तक शूद्र–दलितों को समता के मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। वर्णों के दिल, दिमाग, मन में शूद्र–दलितों के प्रति आज भी घृणा से भरे पड़े हैं और वे उन्हें उनके समानता के अधिकार देकर राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के लिए तैयार नहीं है। इसलिए इससे उत्पीड़ित लोग व्यथित होकर समय–समय पर विरोधस्वरूप इसकी होली जलाते रहते हैं।

'मनुस्मृति' के सभी 12 अध्याय शूद्र विरोधी विषमतापूर्ण, अन्यायकारी व्यवस्था से भरे हुए हैं जो निम्न उदाहरणों से स्पष्ट है–

1. (अवैज्ञानिक ढंग से) ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न होने से, ज्येष्ठ होने से, वेद धारण करने से ब्राह्मण ही सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी है (मनुस्मृति

(शेष पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/–
बुद्धा टू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/–
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/–
दलित उद्घोष	डा. सुमनाक्षर	100/–
दलित साहित्य की हुंकार–सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/–
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
मेरे साक्षात्कार–मेरा जीवन संघर्ष	डा. सुमनाक्षर	300/–
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/–
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	100/–
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	100/–
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	100/–
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/–
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/–
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/–
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/–
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/–
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	100/–
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	100/–
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	200/–
Who's who Dalit Writers in India	Dr. Sumanakshar	500/-
Who's Who–International & National Awardees of B.D.S.A.	Dr. Sumanakshar	500/-

पुस्तक मंगाने के लिए अग्रिम राशि निम्नलिखित अकादमी के खाते में भेजें

Bharatiya Dalit Sahitya Akademi
A/c No. - 2592101012292 (Canara Bank)
IFSC - CNRB0002592
Branch - Model Town, Delhi

सम्पादकीय का शेष....मानवता विरोधी है मनुस्मृति

1–13–14)

2. ब्राह्मण का मंगल सूचक शब्द से, क्षत्रिय का बल सूचक शब्द से, वैश्य का धन सूचक शब्द से और शूद्र (दलित) का निन्दित शब्द से नामकरण करना चाहिए। (मनु. 3–15) यह असमानता की पराकाष्ठा का सूचक है।

3. हीन जाति (शूद्र) के साथ विवाह करने वाले द्विजातीय सन्तान सहित कुलों को 'शूद्रत्व' प्राप्त हो जाता है (मनु. 3–15)।

4. जिस 'द्विज' के घर में अग्निहोत्र, यज्ञादि और श्राद्ध अदि शूद्रा स्त्री के द्वारा सम्पादित हो, उन्हें 'स्वर्ग' प्राप्त नहीं होता। (मनु. 3–15)

5. शूद्रा का अधरपान करने वाले या उसकी सांस से दूषित ब्राह्मण की और उससे पैदा होने वाली संतान की शुद्धि नहीं होती। (मनु. 3–19)

6. ब्राह्मण शूद्र के राज्य में निवास न करे (मनु. 4–61) शूद्र को व्रतादि का उपदेश न दे (मनु. 4–80) ब्राह्मण को क्रोधपूर्वक ताड़ने वाले को 21 जन्मों तक पाप योनियों में रहना पड़ता है। (मनु. 4–166)

7. ब्राह्मण को कटु वचन कहने पर क्षत्रिय को 100 पण, वैश्य को 150 पण और शूद्र को मृत्युदंड का जुर्माना होना चाहिए। (मनु. 8–267) द्विज को कटु वचन कहने पर शूद्र की जीभ काट लेनी चाहिए। (मनु. 8–270)

8. द्विज जातियों (सवर्णों) का नाम लेकर अपशब्द कहने वाले शूद्र के मुख में जलती हुई दस अंगुल लम्बी लोहे की कील डाल देनी चाहिए। (मनु. 8–271)

9. राजा को ऐसे शूद्र के, जो ब्राह्मणों का उपदेश देने का, दंभ करे, उसके मुंह व कान में गरम तेल डालना चाहिए। (मनु. 8–272)

10. शूद्र जिस अंग से द्विज को मारे, उसका वह अंग ही कटवा देना चाहिए। (मनु. 8–279/280)

11. राजा ब्राह्मण के साथ बैठने पर शूद्र को तपाये हुए लोहे से दगवाकर राज्य से निकाल दे या उसके नितम्ब को कटवा दे। (मनु. 8–281)

12. शूद्र यदि ब्राह्मण का अपमान गर्व से थूक फेंककर करे तो उसका लिंग को या 'अपशब्द' कहने पर उसकी गुदा को कटवा दे। (मनु. 8–282)

13. शूद्र यदि अभिमान से ब्राह्मण को बालों से पकड़ ले तो राजा उसके हाथ कटवा दे। (मनु. 8–283)

14. ब्राह्मण शूद्र का धन बिना किसी विकल्प किये, ले ले क्योंकि धन का स्वामी मात्र ब्राह्मण ही है। (मनु. 8–417)

15. ब्राह्मण को पीड़ित करने वाले शूद्र को राजा हाथ पैर काट कर मार डाले। (मनु. 9–248)

16. (अवैज्ञानिक रूप से) मुख, बाहू और उदर से जन्मे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के अतिरिक्त सभी जातियां मलेच्छ भाषा भाषी दस्यु हैं। (मनु. 10–45)

17. द्विजों के अतिरिक्त जातियों, वर्णशंकरों, चण्डाल आदि का निवास चैत्यद्रुम, श्मशान, पहाड़ों व वनों में ही है। (मनु. 10–50)

18. चाण्डाल स्वपच (शूद्र–दलित) गांव के बाहर निवास करें। उनका धन कुत्ते व गधे हों। कफन उनका वस्त्र हो, मिट्टी के फूटे बर्तनों में वे भोजन करें और यायावर (घुमंतू) जीवन जीयें। (मनु.10–51/52)

19. नीच जाति वाला मनुष्य यदि अपने से ऊंची जाति वालों को जीविका (नौकरी) दे तो राजा उसे निर्धन कर अपने राज्य से खदेड़ दे। (मनु. 10–96)

20. शूद्र की सेवा के बदले में ब्राह्मण उसे खाने के लिए मात्र जूठा अन्न, पहने के लिए पुराने कपड़े, बिछाने के लिए अन्न का पुआल या पुरानी टूटी–फूटी खाट आदि दे। (मनु. 10–25)

21. शूद्र को धन संग्रह की मनाई है क्योंकि वह धन ग्रहण करके ब्राह्मणों को ही पीड़ित करेगा। (मनु. 10–129)

22. शूद्र की हत्या करने पर ब्राह्मण मात्र एक बैल तथा ग्यारह गायें दान में दे–यही उसका प्रायश्चित है। (मनु. 11–30)

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि मनुस्मृति को सर्वोपरि धर्म ग्रंथ बताकर ब्राह्मण अपने को सर्वश्रेष्ठ होने का दंभ भरते रहे और मानव जाति के एक समूह–शूद्र वर्ण का हजारों साल से निरन्तर शोषण करते रहे और उन्हें विद्या के प्रकाश से दूर रखा। अब यदि वे विद्या के प्रकाश में अपने शोषण को पहचानकर उस व्यवस्था की नियामक 'मनुस्मृति' को जलाते हैं तो इसमें दोष किसका है? मनु व मनुस्मृति के प्रति दलित जातियों का विरोध सही है।

आज स्वतंत्र भारत में जहां बाबा साहब डा. अम्बेडकर द्वारा निर्मित भारतीय संविधान लागू है जो प्रत्येक व्यक्ति को समता, स्वतंत्रता, बन्धुता के साथ न्याय, सुरक्षा, चिकित्सा की गारन्टी देता है, वहीं वह धार्मिक आस्था और मनवांछित पेशा की खुली छूट देता है। उस लोकतांत्रिक समतावादी भारतीय संविधान के सामने इस विषमतावादी, देश व समाज विरोधी मनुस्मृति व मनु मानसिकता को अब कोन क्यों बर्दाश्त करेगा?

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था–''युगों से ब्राह्मण भारतीय संस्कृति का थातीदार रहा है। अब उसे इस संस्कृति को सबके पास विकीर्ण कर देना चाहिए। उसने इस संस्कृति को जनता में जाने से रोका है। इसीलिए भारत पर मुसलमानों का आक्रमण संभव हो सका। ब्राह्मण ने संस्कृति के भण्डार पर ताला लगाकर रखा था, जन–साधारण को उसमें से कुछ भी नहीं लेने दिया, इसी लिए हजारों सालों तक जो भी जातियां भारत में आती रहीं, हम उनके गुलाम होते गये।

हमारे पतन का कारण ब्राह्मण की अनुदारता रही है। भारत के पास जो भी सांस्कृतिक कोष है, उस जन साधारण के कब्जे में जाने दो, और चूंकि ब्राह्मण ने यह पाप किया है, इसलिए प्रायश्चित भी सबसे पहले उसे ही करना चाहिए।•

– डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर

पृष्ठ 1 का शेष.....देश में असमानताओं व सत्ता-सम्पदा में जातिगत असन्तुलन को मिटाने के लिए जाति जनगणना जरूरी

1931 में उन्होंने सर्वप्रथम जाति जनगणना कराई। और उसी जाति जनगणना के आधार पर सर्वप्रथम दलितों (अछूतों–अनु.सूचित जाति/जनजाति) का सरकारी नौकरियों, शिक्षण संस्थानों, राज्यों के शासन/प्रशासन निगमों व निर्वाचन क्षेत्रों में उनकी आबादी के अनुपात में 'आरक्षण' निर्धारित किया गया। बाबा साहब डा. अम्बेडकर की मांग पर अंग्रेजी शासन ने अछूतों को निर्वाचन में वोट का अधिकार के साथ राज–काज व शिक्षण संस्थानों में उनकी आबादी के अनुपात में 'आरक्षण' देने की घोषणा की। इस घोषणा को ही 'कम्युनल अवार्ड' कहा जाता है। इसके बाद में गांधी जी व बाबा साहब डा. अम्बेडकर के बीच इसी 'कम्युनल अवार्ड' को छोड़ने की एवज में 'पूना पैक्ट समझौता' हुआ जिसमें दलितों (अछूतों) को उनकी आबादी के अनुपात में 'आरक्षण' दिया गया था। भारत के आजाद होने पर भारत का संविधान निर्मित हुआ जिसमें बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने अछूतों (दलितों) के 'आरक्षण' का संवैधानिक बना दिया गया। उसी आधार पर देश के चुनावों में सीटें आरक्षित की गई व सरकारी नौकरियों में आरक्षण दिया जाने लगा। पर अब 2014 में देश में भारतीय जनता पार्टी की सरकार आने पर दलितों (अछूतों) के इसी 'आरक्षण' और संविधान को खत्म करने का संकट मंडराने लगा। बस तभी से भारतीय संविधान व उस द्वारा दिये गये आरक्षण को बचाने तथा सभी नागरिकों की जाति की जनगणना कराने की मांग उठने लगी, क्योंकि जाति की जनगणना आने पर उस आधार पर संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण–कोटे को सही ढंग से भरा जा सकेगा और जो लोग अपनी जाति के कोटे से अधिक कब्जाये बैठे हैं, उनका भी पता चल जायेगा ताकि उनके कब्जाये कोटे से उन लोगों के आरक्षण की पूर्ति हो सकेगी जो आरक्षण द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का अब तक लाभ नहीं उठा पाये हैं।

जातिगत जनगणना के औचित्य पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सकारात्मक रुख से माना जा रहा है कि सरकार इस दिशा में गंभीरता से विचार कर सकती है। इस विषय पर फिर से चर्चा इसलिए छिड़ गई है कि केरल के पलक्कड़ में संघ की तीन दिवसीय अखिल भारतीय स्वयंसेवक बैठक के अंतिम दिन उसके अखिल भारतीय प्रचार प्रमुख सुनील आंबेकर ने प्रेस कांफ्रेन्स कर कहा कि जातिगत जनगणना का उपयोग राजनीतिक या चुनावी उद्देश्य के लिए नहीं किया जाना चाहिए। इसका इस्तेमाल पिछड़ रहे समुदायों और जातियों के कल्याण के लिए होना चाहिए।

अभी तक संघ और भाजपा इस मसले पर कुछ भी कहने से बचते आ रहे थे। जातिगत जनगणना का मुद्दा असल में, पिछले कुछ समय से कांग्रेस काफी जोर–शोर से उठा रही है। कर्नाटक चुनाव से लेकर लोकसभा चुनाव तक में उसने इस पर जोर दिया। राहुल गांधी अपने हर भाषण में यह मुद्दा उठाते देखे जाते हैं। इसलिए कुछ लोगों का मानना है कि भाजपा और आरएसएस को लगने लगा है कि इस विषय में लंबे समय तक चुप्पी साधे रहना नुकसानदेह हो सकता है। इसीलिए वे अब जातिगत जनगणना को उचित बताने लगे हैं।

आरक्षण का मुद्दा पिछले कुछ वर्षों में काफी संवेदनशील हो चुका है। मगर संवैधानिक बाध्यताओं के चलते राज्य सरकारें पचास फीसदी की सीमा पार नहीं कर पातीं। कुछ वर्ष पहले केंद्र सरकार ने भी आरक्षण का दायरा बढ़ा कर उसमें कुछ और जातियों को शामिल किया था। मगर तमाम प्रयोगों के बावजूद आरक्षण को लेकर बहुत सारे समुदायों और जातियों मे असंतोष बना हुआ है। ऐसे में सिद्धांत रूप में यह उपाय निकाला गया कि जातिवार जनगणना होनी चाहिए और जिस जाति की जितनी संख्या हो, उसी आधार पर आरक्षण तय किया जाए। इसके लिए संविधान संशोधन हो।

सर्वोच्च न्यायालय ने भी पिछले दिनों व्यवस्था दी कि मलाईदार तबके को आरक्षण की व्यवस्था से बाहर रखा जाना चाहिए और जातियों के भीतर उपजातियों का भी वर्गीकरण होना चाहिए। मगर इस व्यवस्था के विरोध में बहुजन समाज पार्टी के साथ–साथ अन्य विरोधी पार्टियों ने भी देशव्यापी आंदोलन कर दिया था।

कोई भी राजनीतिक दल आरक्षण के प्रावधान का सैद्धांतिक रूप से विरोध नहीं कर सकता। अब जिस तरह कांग्रेस ने जातिगत जनगणना को बड़ा मुद्दा बना दिया है, उसमें हर पार्टी को अपना जनाधार संभालने की चिंता पैदा हो गई है। इसलिए यह कहना कि इसका राजनीतिक इस्तेमाल नहीं होना चाहिए, आदर्श वाक्य जैसा हो सकता है। मगर वास्तव में सभी दल इसके जरिए अपना राजनीतिक हित साधने के प्रयास कर रहे हैं। यह तो सही है कि वंचित समुदायों और जातियों को उनकी संख्या के आधार पर वरीयता देकर ही उनके कल्याण की उम्मीद बन सकती है। पर हमारे देश में जिस तरह की जातिगत जटिलताएं हैं, उन्हें सुलझाना आसान काम नहीं है। अगर संघ और भाजपा सचमुच

इसके पक्ष में हैं, तो उन्हें जातिगत जनगणना से जुड़ी गुत्थियों को सुलझाने के लिए समन्वित प्रयास करने होंगे। इसमें दूसरे दलों से भी सकारात्मक सहयोग की अपेक्षा होगी।

देश को आजाद हुए 75 साल हो गये और देश में भारतीय संविधान लागू किये 70 साल हो गये। इस बीच कई हुकुमत आईं और चली गईं किसी ने भी देश के दलित, शोषित, वंचित समाज को देश की मुख्यधारा में लाने के लिए सच्चे मन से कार्य नहीं किया। कांग्रेस के शासन में देश की पंचवर्षीय योजनाओं में दलितों के उत्थान के लिए अलग से विशेष कम्पोनेंट प्लान के तहत धनराशि आवंटित की गई थी, पर वह धनराशि उन पर खर्च ही नहीं की गई। यही हाल, दलितों के आरक्षित कोटे का है। आरक्षित कोटे के अन्तर्गत कभी भी उनके कोटे की सीटें भरी ही नहीं गई। अगर दलितों के विकास, उत्थान, कल्याण के लिए वह धनराशि खर्च की गई होती और उनके आरक्षित कोटे की सीटों को सच्चे मन से भर दिया होता तो देश के दलित–शोषितों की हालत दूसरी ही होती। वे आज की तरह गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी के शिकार नहीं होते। सभी सरकारी नौकरियों में अपने आरक्षित कोटे की बदौलत सुख, शान्ति और सम्पन्नता का जीवन बिताते हुए होते। कांग्रेस के बाद की हुकूमतों ने तो उनसे भी ज्यादा बदतर उपेक्षा, अनदेखी और झूठ–मूठ दिखावे का कार्य किया। भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) का चरित्र तो शुरू से ही मनुवादी होने के कारण दलित विरोधी रहा है। उसने कभी भी नहीं चाहा कि देश व समाज में सबसे नीचे का तबका आरक्षण के बल पर उनकी बराबरी कर उनके बराबर आ बैठे। इसी लिए वे शुरू से ही दलितों को समानता का दर्जा देने वाले भारतीय संविधान और उसके अन्तर्गत दिये जाने वाले आरक्षण कोटे के सदैव विरोधी रहे।

देश की आजादी के 75 साल बाद अब देश का दलित, शोषित, वंचित, लोग समझ गये हैं कि उन्हें भारतीय संविधान, आरक्षण और आत्म सम्मानकी स्वयं रक्षा करनी है और देश में जिसकी जितनी आबादी है उसे देश की धन–सम्पदा, सत्ता में हिस्सेदारी दिलानी हैं इसीलिए सारे देश में जाति जनगणना कराने की मांग ने जोर पकड़ा है। देश की सभी विरोधी दलों की पार्टियां इस मांग के लिए लाबंद होकर दलितों के साथ एक मंच पर आ गई हैं। अब तक इसके विरुद्ध विरोधी स्वर बोलने वाली भाजपा और आर.एस.एस. बहुजनों के बहुमत को देखकर अब जाति जनगणना के पक्ष में बोलने लगी हैं यह दलित समाज की एकता की जीत है।

भारतीय दलित साहित्य अकादमी गत 40 वर्षों से देश में वैचारिक क्रांति द्वारा दलितों को एकजुट कर भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृ भाव, न्याय के अपने अधिकारों की रक्षा करने और बाबा साहब डा. अम्बेडकर के नाम व काम को सदैव जीवित रखने और भारतीय संविधान के साथ दलित–शोषितों को उनकी आबादी के अनुपात में धन, सम्पदा, सत्ता में बराबरी की हिस्सेदारी दिलाने की लड़ाई लड़ती आई है, जो सबका सहयोग मिलने से अब कारगर हुई नजर आ रही है। अब देश में जाति जनगणना होकर रहेगी, और अब सब लोग अपनी जाति की आबादी का हिस्सा मिल जाने से सुख, शान्ति, चिन्ता विहीन जीवन जी सकेंगे।

सम्मेलन में पारित प्रस्ताव

भारतीय दलित साहित्य अकादमी अपने इस मंच से सरकार से (1) जाति जनगणना कराने की पुरजोर मांग करती है और यह भी मांग करती है कि (2) जाति जनगणना जाति आरक्षण कोटे के विषय को सरकार भारतीय संविधान की 9वीं सूची में शामिल करायें, ताकि भविष्य में कोई इस विषय को अदालत में चुनौती न दे सके।

सम्मेलन में अन्य निम्न प्रस्ताव पारित किये गये–

3. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति की आरक्षित पदों का 'बैक लाग' तुरन्त पूरा किया जाए।

4. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति के उत्थान हेतु 'स्पेशल कम्पोनेंट प्लान' के अन्तर्गत आबंटित धनराशि को विशेष अभियान चलाकर पूरा किया जाए।

5. दलितों पर जातिगत अत्याचार, दुराचार, शोषण, दमन, बलात्कार, छुआछूत पर तुरन्त रोक लगाई जाए।

6. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति के शिक्षित युवा / युवतियों की सरकारी पदों पर बिना टेस्ट / इन्टरव्यू लिए भर्ती की जाए।

7. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति के लिए अस्पतालों में इलाज के लिए विशेष वार्ड बनाये जाएं।

8. अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति पर बिना कारण के झूठे थोपे गये मुकदमों को लड़ने के लिए सरकार विशेष सहायता कोष स्थापित करे।

अकादमी के इस प्रादेशिक सम्मेलन में दलितोत्थान के क्षेत्र में विशेष कार्य करने वाले कार्यकर्त्ताओं को शाल व प्रशस्तिपत्र देकर सम्मानित किया गया। इस सुअवसर पर अकादमी की उड़ीसा राज्य शाखा के अध्यक्ष श्री निहाल सिंह एवं उपाध्यक्ष श्रीमती मोमिना खातून को भारतीय दलित साहित्य अकादमी दिल्ली की ओर से उनके विशिष्ठ कार्यों के लिए राष्ट्रीय अध्यक्ष डा. सोहनपाल सुमनाक्षर ने उन्हें 'प्लक आफ ओनर' की विशेष शील्ड / शाल व प्रशस्तिपत्र देकर सम्मानित किया। जन मन गण–राष्ट्रीय गान के साथ सम्मेलन कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।•

दलित साहित्य सामाजिक समानता, भाईचारा और मनुष्य की आजादी के लिए प्रतिबद्ध है

रमणिका गुप्ता

यह सही है कि प्रगतिशील जनवादी और जनसंस्कृति साहित्य भी भारतीय मानसिकता बदलने वाला साहित्य है लेकिन वह भारत में व्याप्त जातीयता की हकीकत को नजरअंदाज कर गया और केवल आर्थिक मुक्ति के लिए वर्गीय संघर्ष करता रहा। दलित साहित्य भारत की वर्णीय व्यवस्था पर चोट कर मनुष्य की सामाजिक समानता और सामाजिक न्याय की लड़ाई लड़ रहा है। जैसे प्रगतिशील, जनवादी और जनसंस्कृति साहित्य वर्गीय संघर्ष और वर्गीय समानता के लिए प्रतिबद्ध हैं, उसी तरह दलित साहित्य सामाजिक समानता, भाईचारा और मनुष्य की आजादी के लिए प्रतिबद्ध है। इसके साथ–साथ वह ऊपर वर्णित साहित्य की तरह ही वर्गीय भेदभाव रहित, जाति–विहीन समाज बनाने का लक्ष्य भी रखता है। वह बुनियादी सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन चाहती है और उसके लिए संघर्षरत है दरअसल ये एक दूसरे के पूरक हैं। अलग–अलग ये भी एकपक्षीय हो जाते हैं। दलित साहित्य वर्णीय दृष्टिकोण से तथ्यों को सामने लाता है इसलिए ये 'दलित साहित्य' कहलाता है।

जनवादी, प्रगतिशीलवादी भी परिवर्तनकामी हैं और कल्पना पर नहीं, यथार्थ पर आधारित है ये भी परिवर्तन के औजार के रूप में संघर्षरत हैं। फैज के शब्दों में, **''दुनिया में और भी गम हैं मुहब्बत के सिवा''** अथवा साहिर की ताजमहल पर लिखी नज्म **''किसी शहंशाह ने लेकर दौलत का सहारा/उड़ाया है हम गरीबों की मुहब्बत का मजाक/मेरे महबूब मुझसे कहीं और मिलाकर।''** की सोच वर्गीय दृष्टिकोण से प्रतिबद्ध है और उस की प्रेरक भी है। लेकिन कंवल भारती के शब्दों में–''चिड़िया भूख से नहीं चिड़िया होने के कारण मारी गई'' भारत में प्रचलित जातीय भेदभाव की मानसिकता के खिलाफ बगावत करने की प्रेरणा देती है। दोनों समानता की इच्छुक हैं। दोनों शोषण–विरोधी हैं–एक आर्थिक तो दूसरा सामाजिक बराबरी की मुहिम चलाता है। यदि दोनों एक साथ चलें तो विचारधारा मुकम्मिल हो जायेगी। पर कुछ प्रगतिशील, जनवादी इस सोच के कायल हैं कि आर्थिक सम्पन्नता आने से ही सामाजिक समानता प्राप्त हो जायेगी।''

यह सोच भारत के संदर्भ में सही नहीं है। यहां जाति जन्मना है, पेशा जन्मना है और समृद्धि सामाजिक विशेषता की द्योतक नहीं है। जन्मजात जाति ही सामाजिक सोपान में ऊंच–नीच का स्तर निर्धारित करती है। जब प्रगतिशील, जनवादी लेखन आया, तब दलित वर्ग पढ़–लिखकर उतनी मात्रा में नहीं आया था कि वह साहित्य में हस्तक्षेप कर सके। महाराष्ट्र में यह चेतना आजादी से पहले आ गई थी पर भारत की हिन्दी पट्टी में यह चेतना बाद में आई। जब दलितों की नई पीढ़ी पढ़–लिखकर आई तो उन्होंने अपने अनुभव, अपनी पीड़ा, अपना आक्रोश व्यक्त करना शुरू किया।

बाबा जोतिबा फुले और डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा के अनुरूप उनके नेतृत्व में वर्णव्यवस्था, जातीय भेदभाव के खिलाफ आन्दोलन चले और जातिविहीन समाज तथा आत्मसम्मान और प्रतिष्ठा की मुहिम शुरू हुई। महाराष्ट्र के कुछ साहित्यकार तथा दलित समाज के युवा बुद्धिजीवी भी इस आन्दोलन से प्रेरित हुए और इसे प्रेरणा देने के लिए जुट गये। उन्होंने सीधे वर्ण–व्यवस्था पर चोट की और सांस्कृतिक परिवर्तन की भूख जगाई। संस्कृति, धर्म, भाग्य और जातीय संकीर्णता के खिलाफ विद्रोह उठा। यह साहित्य और आन्दोलन दोनों में मुखरित हुआ।

वामपंथी एवं प्रगतिशील लेखक भी इससे जुड़े। लेकिन इनमें अधिकांश लोग इस जिद पर अड़े रहे कि आर्थिक क्रान्ति होने पर अपने आप ही सामाजिक परिवर्तन हो जाएगा, यानि वे सामाजिक परिवर्तन को तत्काल उतना जरूरी नहीं समझे और वर्ण और जाति के नाम मात्र से ही घबराने लगे। वह इसे मजदूर एकता का तोड़क भी मानने लगे। इस प्रकार उस समय वे दलित आन्दोलन में पिछड़ गये या चूक गये। कुछ इस आन्दोलन को साम्राज्यवादी षड्यंत्र का अंग और वर्गीय एकता का तोड़क भी बताने लगे दूसरी तरफ उन पर यह भी आरोप है कि वे धर्म अथवा वर्ण के विरुद्ध आन्दोलन करने से इसलिए हिचकिचाते थे कि कहीं उनका उच्च जातीय मजदूर वर्ग अथवा कैडर बिदक न जाए। उनके इसी रवैये के चलते दलित लेखकों का एक खेमा उन्हें अपना विरोधी

हिमायती
7 / सितम्बर (प्रथम) 2024 (कुल पृष्ठ 4)
प्रकाशन तिथि : 31 अगस्त, 2024
आर. एन. आई. नं. 40611/62
रजि. G-3/DL(N)/090/2018-2020

मान, कर शत्रु तक कहने लगा। दलित इसे अपनी अस्मिता की पहचान का साहित्य मानते हैं और यह है भी एक तत्यक्त समाज की पीड़ा, जुल्म और सपनों का दस्तावेज जिसे सवर्ण समाज ने कभी झेला नहीं, उल्टे जुल्म ढाने में वे ही अगुआ रहे। दोनों का नजरिया एक हो ही नहीं सकता था इस जातीय भेदभाव के सवाल पर। इसलिए दलित साहित्य अलग है जो एक विशाल जनसमूह का साहित्य है।

क्या भगवान, पुनर्जन्म, विकृत, रुढ़ियों, अंधविश्वासों, चमत्कारों के विरुद्ध लिखा जा रहा दलित साहित्य अथवा भेदभाव की नीति के खिलाफ, जन्म और जाति के आधार पर गैरबराबरी के विरुद्ध लिखा जा रहा साहित्य या जाति के आधार पर किये गये सदियों से बर्बर अत्याचारों की पीड़ा का बखान करता साहित्य, उन पर अपना रोष प्रकट कर इस सामाजिक व्यवस्था को बदलने के लिए संकल्पित होता साहित्य–जन या जनवाद विरोधी है? क्या जनवादी साहित्यकारों को भी ऐसा साहित्य पहले से ही रचना नहीं चाहिए था? आज क्यों सब प्रमाणित करने की होड़ लगा रहे हैं कि प्रेमचन्द–निराला ने तो पहले ही ये लिखा था? इसीलिए न कि वे दलित चेतना और उसकी वर्णविरोधी दृष्टि के अस्तित्व को अब वे नकार नहीं पा रहे? ठीक है लिखा था सो लिखा था प्रेमचन्द ने, कभी निराला ने भी लिखा था। आज वो दलित भी लिख रहे हैं जिन्होंने ये सब भोगा है। निराला या प्रेमचंद को क्यों इसी कतार में खड़ा करने को उद्दत हैं आज सब? वे प्रगतिशील विचारधारा के तहत सामाजिक कुरीतियों को दर्शाते थे अपने साहित्य में, लेकिन चोट मुख्यतः वर्ग पर ही थी। वर्ण पर चोट उनका लक्ष्य नहीं था। उस समय ऐसा लिखना समयानुकूल और ठीक भी था। उसके बाद किसने कहा था कि साहित्यकार वर्ण–व्यवस्था के खिलाफ न लिखें अथवा वर्ण–व्यवस्था के दर्द को नजरअंदाज कर जायें या गैर जरूरी समझें?

दरअसल वर्ण–व्यवस्था को नजरअंदाज करने की प्रगतिशील और जनवादी लेखकों ने ऐतिहासिक भूल की। सांस्कृतिक क्रांति को यह गौण समझते रहे। आर्थिक क्रांति के बाद स्वतः सांस्कृतिक क्रांति हो जायेगी। कहते रहे–जबकि आज साम्राज्यवाद संस्कृति के माध्यम से ही जनवादी विचारधारा को पछाड़ने के लिए प्रयासरत है। इसलिए इन्हें सबक लेना चाहिये। आर्थिक, सामाजिक दोनों संघर्ष साथ–साथ करने होंगे। एक को दूसरे का पूरक मानना होगा। नहीं तो महाभारत, रामायण की संस्कृति हावी हो जायेगी।

अमरीका के साम्राज्यवाद और भारत के इस हिन्दुत्ववाद में कोई खास अंतर नहीं है। ना ही पूंजीवाद और ब्राह्मणवाद में फर्क है। दोनों परजीवी जमातें बनाते हैं–दोनों अपने स्वार्थ और मुनाफे के लिए लोगों को ठगते हैं–दोनों अपनी मंडियां बनाते हैं–एक बाजार में, दूसरे जजमानों में, धर्म की दुकानों में। शास्त्रों का चमत्कार, भय अथवा लोभ दिखाकर मनुवादी, ब्राह्मणवादी एक वर्ग को अधिकार–विहीन बनाते हैं। सामाजिक और आर्थिक दोनों तौर पर। पूंजीवाद तो केवल आर्थिक तौर पर ही विपन्न बनाता है। वह श्रमिक या गुलाम को ज्यादा लाभ उठाने के लिए प्रशिक्षित भी करता है–शारीरिक और मानसिक तौर पर; लेकिन मनुवाद तो सामाजिक के साथ–साथ आर्थिक, राजनैतिक यानि तीनों प्रकार के प्रतिबंध लगाता है। वह उन्हें मनुष्य ही नहीं मानता।

कई लोग अब यह मत कहने लगें कि ये पुरानी बातें हैं। ये आज भी लागू हैं। सबके घर में कहीं छिपा है ये मनुवाद। आपके मन में भी हैं भले आप कहें आप जात–पांत नहीं मानते। पर कहीं न कहीं आप हिन्दुत्व के अभिजन और विशिष्टता–वाद से पीड़ित हैं। यही अन्तर है भारत के अधिकांश प्रगतिशील व दलित लेखकों के लेखन में।

हां हाल में जनवादी लेखक संघ ने अपने राष्ट्रीय सम्मेलन में 'दलित साहित्य' के अस्तित्व को स्वीकारा है – उसका समर्थन किया है और अपने राष्ट्रीय सम्मेलन में दलितों की अस्मिता की लड़ाई का समर्थन देने को कहा है। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी मार्क्सवादी ने अपनी 14वीं कांग्रेस में दलितों की प्रतिष्ठा की, सम्मान की लड़ाई का साथ देने, उनके सामाजिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष करने, उसमें सक्रिय हस्तक्षेप करने की कार्यनीति अपनाई है। 1964 में ही पार्टी के कार्यक्रम में धारा 47 के तहत भूमि की लड़ाई के साथ–साथ गांव के सुपर–स्ट्रक्चर के विरुद्ध संघर्ष को भी जरूरी माना है चूंकि जमीन और सुपर–स्ट्रक्चर दोनों का विछिन्न संबंध है। लेकिन इसे कड़ाई से अमल में लाना अभी बाकी है।

प्रगतिशील जनवादी या जनसंस्कृति के साहित्यकार दलित मुद्दों को अपना कर, उस पर लिखें, दलितों को प्रोत्साहित करें अपनी लड़ाई लड़ने के लिए। वे राजनीति में समाज के बराबर का हक मांगने पर, उन्हें जातिवादी कहना बन्द करें और उनकी नजरों में उस जुल्म को समझें, उन घृणा भरी नजरों को देखें, जिससे उच्च जाति के अहम् से भरे लोग उन्हें आज भी देखते हैं! वे उन्हें साथी समझें–उन्हें उपदेश नहीं दें। •

दलित साहित्य : भारतीय साहित्य की विरल घटना

• रमेशचन्द्र परमार

समानता, स्वतन्त्रता, बन्धुता और न्याय अनहोनी घटना पर आधारित वर्ग विहीन, वर्ग विहित, शोषणमुक्त समाज की स्थापना करने के लिए बाबा साहब डा. अम्बेडकर ने अपने पूरे जीवन में संघर्ष जारी रखा। आजादी मिलने के बाद भारतीय संविधान बनाकर लोकतांत्रिक सत्ता प्रवाह में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने दलित, पीड़ित, शोषित, जनसमुदाय को भी शामिल कर दिया। राजनीतिक आजादी के बाद आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आजादी से वंचित दलित समुदायों को अपना संघर्ष जारी रखा पड़ा क्योंकि आजादी के बाद विचार और व्यवहार के विरोधाभास और विसंगतियां पहली बार क्रूरतापूर्ण रीति से उभर कर सामने आयी हैं।

हमारे संघर्ष का आयाम एक नहीं है, अनेक हैं। साहित्य भी संघर्षपथ का साक्षी बन सकता है। शब्द की शक्ति विद्रोह की भूमि तैयार कर सकती है। हम सब रचनाकर्मियों को सबके सुख–दुख, मान–अपमान, विजय–पराजय, शक्ति–अशक्ति, आशा–निराशा एक और अविभाज्य है।

आजादी के बाद भारतीय साहित्य के आकाश में कोई महत्वपूर्ण विरल घटना है तो यह है 'दलित साहित्य'। 1960 के दशक से लगातार दलित साहित्यकारों ने अपने सृजन का अम्बार खड़ा कर दिया है। दलित साहित्य की अपूर्व घटना है और भारतीय साहित्य लम्बे अरसे तक असरकारक धारा के रूप में आकर्षण का केन्द्र बनाने वाली वास्तविकता है। आज दलित साहित्य के पक्ष में जितनी सबल, तर्कबद्ध दलील की जाती है उतनी ही उग्रता से उसके विपक्ष में परमपरावादी खेमों से प्रतिवाद भी किया जाता है।

साहित्य समाज से अलग हो सकता है? समाज का सृजन हो सकता है? साहित्य और समाज के बाद कैसे अन्तर सम्बन्ध है? समाज की कितना असर साहित्य में आता है और साहित्य का कितना असर समाज पर होता है? इन सभी प्रश्नों की लम्बी बहस हो गई है। समाज को अछूता रखकर किया गया साहित्य सृजन कितना सार्थक हो सकता है यह प्रश्न पुनः बहस का केन्द्र बना हुआ है?

यह मानना पड़ेगा कि सामाजिक समस्याएं और साहित्यिक समस्याओं को भी अविभाज्यता और एकरूपता के कारण ही दलित साहित्य जीवंत, ज्यादा सार्थक और महत्वपूर्ण अनुभूतिपूर्ण बन गया है। पददलित समाज की आशा और निराशा, सुख और दुःख, वेदना और व्यथा, मान और अपमान, विजय और पराजय, आक्रोश और अपमान तो दलित साहित्य की लाक्षणिकताएं हैं। दलित साहित्य में तो जीवन धड़कन है, उससे तो अनुभूतिपूर्ण अहसास छलकता है। दलित साहित्य का एक लक्ष्य है। कवि के शब्दों में उस लक्ष्य को कहना हो तो कह सकते हैं कि–

अजन्मे कल के लिए
मैं सूरज उगाना चाहता हूं।
अनकही मेरी कहानी
रात के तूफान आंधी बादलों से
आते हैं संघर्ष भेरी पुरानी
लाख नभ ने बिजलियां
मुझ पर गिराई
आज तक मैंने, हार न मानी
मैं पहाड़ों से बड़ा हूं
मैं सितारों पर चढ़ा हूं
आंधियों की बांह थामे
मैं समुन्दर पर खड़ा हूं
बादलों के पार चंदन
चांदनी का देश है जो
भोर की अंगड़ाइयों में
टूटते रक्तिम क्षितिज पर
रात के काले अंधेरा का
फुहासा शेष है जो
मैं दिशाओं को वही
चन्दन लगाना चाहता हूं
मुट्ठियों में बन्द है मेरा सवेरा
तोड़कर अंध तिमिर का बंधा घेरा
मैं खुले आकाश में
फिर मुस्करा कर
अजन्मे कल के लिए
सूरज उगाना चाहता हूं
सूरज उगाना चाहता हूं
सूरज उगाना चाहता हूं।

अनकही कहानी कहकर रुकने नहीं वाला दलित साहित्यकार संघर्ष जारी रखकर अजन्मे कल के लिए कृतसंकल्प है और यही बात अपने आप में एक बहुत बड़ी संभावना और लाक्षणिकता की ओर इशारा कर रही है।

चातुवर्ण व्यवस्था की अमानुषी व्यवस्था ने जिन्हें पढ़ने से षड्यंत्रपूर्ण रीति से वंचित कर दिया था, ज्ञान और विज्ञान के द्वार बन्द करके शोषण का साधन बना दिया गया था, वही जनसमूह पूरे इतिहास में पहली बार कलम का सहारा लेकर मैदान में आया है। अनकही कहानी को जन्म मिल रहा है। आधुनिक साहित्य को ही नहीं, हिन्दुस्तान के पूरे इतिहास में 'दलित साहित्य' अनहोनी घटना है, विरल और अभूतपूर्व घटना है। •

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। ❑ सह सम्पादक - जय सुमनाक्षर, फोन : 27421449, मो. 9810278936 **Email-sumanakshar@ymail.com**

नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।

सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009